इकाई 4 स्वतंत्रता

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना

4.2 नकारात्मक स्वतंत्रता

4.3 सकारात्मक स्वतंत्रता

4.4 स्वतंत्रता पर सामयिक बहस

4.5 सारांश

4.6 अभ्यास

4.1 प्रस्तावना

स्वतंत्रता की र यना तीन शब्दों के बीच संबंध जोड़ती है : यह किसी 'एक्स' व्यष्टि की, किसी 'ए' बाधा से मुक्ति ो ओर इशारा करती है, ताकि वह 'बी' कर सके। दूसरे शब्दों में, कुमारी 'एक्स' 'ए' द्वारा 'बी' करने से नहीं रोकी जाती हैं, अथवा निग्रह 'ए' की अनुपस्थिति में, कुमारी 'एक्स' 'बी' करने को स्वतंत्र हैं। जैराल्ड मैककैलम जिसने स्वतंत्रता के अर्थ की हमारे समक्ष यह समझ प्रस्तुत की, ने तर्क दिया कि स्वतंत्रता के विश्लेषकों को नकारात्मक स्वतंत्रता के अथवा सकारात्मक स्वतंत्रता के पक्षधरों में विभाजित करने की इच्छा रखना युक्तिसंगत है, क्योंकि स्वतंत्रता के सभी सिद्धांतियों ने इन्हीं तीन शर्तों का प्रयोग किया (मैककैलम, 1967)। हमें, हालाँकि, लगता है कि स्वतंत्रता की संकल्पनाओं में 'ए' और 'बी' पर दिए जाने वाले तुलनात्मक बलाघात के माध्यम से अब भी अंतर किया जा सकता है। स्वतंत्रता की नकारात्मक संकल्पनाएँ एक अनिश्चित समूह का संकेत करने के लिए 'बी' का प्रयोग करती हैं, (कुछ भी न करने की क्रिया से आरंभ कर), जबकि वे 'ए' का प्रयोग एक काफी सीमित समूह हेतु करते हैं, कभी–कभी निग्रहों के रूप में सिर्फ़ इरादतन थोपे गए भौतिक अवरोधों को गिनकर, और निग्रहों के समूह में शामिल किए जाने वाले अधिक बारंबार नियमों को स्वीकार करके। सकारात्मक स्वतंत्रता सिद्धांतवादी उल्टा करते हैं : वे प्रत्येक कार्रवाई को 'बी' के तहत स्वीकार नहीं करते हैं – स्वयं को दास रूप में बेच देना स्वतंत्रता नहीं है – जबकि निग्रहों वाला उनका समूह इतने विस्तार से परिभाषित किया जाता है कि न सिर्फ़ भौतिक अवरोध व नियम ही, बल्कि अक्षमताएँ भी शामिल हों, या तो सामग्री अथवा मानसिक संसाधनों के अभाव के रूप में।

चलिए, इससे पहले कि हम स्वतंत्रता की इन दो विशिष्ट संकल्पनाओं को और विस्तार में देखें, स्वतंत्रता की संकल्पना के विषय में कुछ सामान्य अवलोकन करें। कुछ समय पूर्व, खासकर आलोचक सिद्धांतियों के बीच, इस बात पर व्यापक निराशा थी कि स्वतंत्रता अपना वायदा निभाने में असमर्थ रही थी। स्वतंत्रता मूल्य की चर्चाओं का बचाव अक्सर वारणियों व चेतावनियों के सहारे किया जाता था। यह तर्क देने के लिए कि पूरे मानव इतिहास में, कुछ की स्वतंत्रता को अनेक की प्रधानता की आवश्यकता पड़ी थी, कुछ लेखकों ने मार्क्सवादी आलोचना को आगे बढ़ाया कि पूँजीवादियों की स्वतंत्रता कामगार वर्ग की स्वतंत्रता के अभाव पर निर्भर है, पुरुष यूनानी व अमेरिकी नागरिकों की स्वतंत्रता दासों की स्वतंत्रता का ही अभाव थी, पुरुषों की स्वतंत्रता महिलाओं की प्रधानता पर आधारित है, और धनी उत्तरी राष्ट्रों के अधिवासी–समूहों द्वारा उपभोग की जाने वाली स्वतंत्रताएँ निर्धन दक्षिणी

राष्ट्रों पर उनके नियंत्रण से ही परिणत होती हैं। यह ऐतिहासिक साक्ष्य एक आम सिद्धांत को जन्म देता है कि "कुछ की आज़ादी दूसरों की निर्भरता को आवश्यक के साथ–साथ लाभदायक भी बना देती है; जबकि एक भाग की अस्वतंत्रता किसी दूसरे की स्वतंत्रता को संभव बनाती है"। (बौमैन, ज़ैड, 1988, पृ.19) यदि स्वतंत्रता का अर्थ दूसरों को जीतकर अधीन करने हेतु स्वतंत्र होना है, तब मानो कि यह कोई नियामक मूल्य नहीं रखता है।

आलोचकों ने आधुनिक समाज की सच्चाई को छुपाते मुखौटों के रूप में विद्यमान उद्धारक परम्पराओं संबंधी बढ़ते निग्रहों की एक रीति के रूप में निंदा की। आधुनिकता ने न सिर्फ़ अवपीड़क राज्य तंत्रों के बृहत्–स्तरीय विकसन को देखा है, बल्कि स्कूल व दफ़्तरशाही जैसी अनेक नियामक संस्थाएँ भी, उदाहरण के लिए, चाहती हैं कि नागरिकगण इस तरीके से व्यवहार करें कि वह उनकी स्वतंत्रता तक नहीं, वरन् उनके अधीनीकरण तक ही पहुँचे। आधुनिकता के बुद्धिजीवियों ने इस छुपी प्रधानता पर सत्याभासी व्याख्या करते हुए स्वतंत्रता की संकल्पनाएँ प्रयोग करने की भूल की। (देखें फूको, *डिसिप्लिन एण्ड पनिश*)।

अन्ततः, कुछ नारी–अधिकारवादियों ने स्वतंत्रता की प्रचलित परिकल्पनाओं पर प्रहार किया कि वे एक पुरुष जातीय पूर्वाग्रह से संक्रमित हैं और इसी कारण महिलाओं की स्वतंत्रता को विस्तार दिए जाने के लिहाज से संदेहास्पद हैं। स्वतंत्रता को अब तक, उनका तर्क है, महज पुरुष अनुभव व परिस्थितियों के आधार पर ही संकल्पना में ढाला जाता रहा है। स्वतंत्रता की इस संकल्पना को स्वीकार कर लेने का अर्थ है, महिलाओं की गतिविधियों के एक बड़े हिस्से को अनदेखा करना, और इसलिए इस संकल्पना को महिलाओं हेतु प्रयोग में लाना उनके हित में नहीं हो सकता है। यह कहा भी गया है कि स्वतंत्रता–मूल्य पर संकेन्द्रण के महिला–विरोधी निहितार्थ हो सकते हैं : निग्रहों के अभाव के रूप परिभाषित स्वतंत्रता को "मानवता के प्रमाण–चिह्न के रूप में देखना महिलाओं की ग़ैर–मानवीय स्थिति का दावा किए जाने का एक और साधन प्रदान करता है।" (एन. जे. हिर्षमान, 1989, पृ. 1236)

स्वतंत्रता विषयक ये संदेह, वस्तुतः, उसके परित्यजन में परिणत नहीं हुए। यह स्पष्ट है कि आज़ पूरे विश्वभर में, विरोध आन्दोलन स्वतंत्रता के नाम पर अपने संघर्षों को जारी रखे हैं और यही दमन के ख़िलाफ अनेक आन्दोलनों के पीछे प्रेरणा बनी हुई है। तब सिद्धान्तियों हेतु नियत काम है, स्वतंत्रता की ओर अपने आलोचनात्मक दृष्टिकोण का प्रयोग स्वतंत्रता का ऐसा एक संकेतार्थ निकालकर देना कि जो पहले वाली आपत्तियों में से प्रत्येक का सामना कर सके : कि कुछ की स्वतंत्रता को हमेशा दूसरों की स्वतंत्रता के अभाव की अपेक्षा होती है; कि आधुनिकता, कपटपूर्ण तरीकों से, हर किसी को कम स्वतंत्र कर देती है; और कि स्वतंत्रता की प्रचलित संकल्पनाएँ दोनों लिंगों पर बिल्कुल भी प्रयोज्य नहीं हो सकतीं। इस बात पर ग़ौर करना दिलचस्प होगा कि स्वतंत्रता की एक उपयुक्त संकल्पना हेतु खोज़ अब उन दोनों ही शिविरों – नकारात्मक एवं सकारात्मक स्वतंत्रता – में से किसी एक में भी शामिल होकर नहीं कराई जा रही है, जिनमें कि स्वतंत्रता समर्थक परम्परागत रूप से बँटे रहे हैं। हुआ यह कि स्व–निर्णय वाले अपने मर्म विचार को स्वीकार कर लेने के बाद स्वतंत्रता पर चर्चाएँ तब सामान्यतः स्वतंत्रता की नकारात्मक व सकारात्मक संकल्पनाओं की परिभाषा व तुलना करतीं और किसी एक, अथवा स्वतंत्रता–सिद्धांत की किसी सापेक्ष व्याख्या के रक्षार्थ खड़ी होतीं। नवीन चर्चाएँ, दूसरी ओर, यथार्थतः आंतरिक ढाँचों व स्वतंत्रता की दोनों ही संकल्पनाओं के संदेहास्पद होने पर सवाल करने के प्रयास में रहती हैं, और इन दोनों ही के स्थान पर स्वतंत्रता की कोई अन्य संकल्पना लाना चाहती हैं।

नकारात्मक–स्वतंत्रता सिद्धांत के, उदाहरण के लिए, उसके आरंभ–बिंदु, प्रदत्त इच्छाओं व वरीयताओं वाली एक व्यक्ति, के आधार पर आलोचना की गई है। स्वतंत्रता को किसी व्यक्ति की संभावित वरीयताओं के परिपालन में गैर–दखलंदाज़ी के रूप में परिभाषित करते हुए, यह परिकल्पना इस बात को नहीं मान पाती है कि स्व–निर्णय के रूप में स्वतंत्रता की धारणा को इस परीक्षण की अपेक्षा है कि दी गई विद्यमान सामाजिक परिस्थितियों में, क्या इन वरीयताओं की रचना स्वायत्त हो अथवा नहीं। एक स्वतंत्रता–सिद्धांत में इस प्रकार की परिस्थितियों का एक विश्लेषण न सिर्फ़ भौतिक व विधिसंगत हस्तक्षेप के अभाव के लिहाज से हो, बल्कि स्वायत्त रूप से पैदा हुई इच्छाओं व वरीयताओं को संभव बनाने के लिए भी हो।

स्वतंत्रता की सकारात्मक संकल्पना, यह माना जाता है, व्यक्तियों को प्रदत्त इच्छाओं के सहारे नहीं मानकर चलती, और स्वतंत्रता को महज़ गैर–दखलंदाज़ी से भी परे देखने का प्रयास करती है। चूँकि यह स्वतंत्रता को स्व–प्रदत्त विवेकपूर्ण नियमों का पालन करने के रूप में परिभाषित करती है, यह एक व्यक्ति के स्वत्व की रचना–प्रक्रिया का विश्लेषण करती है, जो स्व–निर्णय के रूप में उस व्यक्ति की स्वतंत्रता का आधार बन जाती है। इसके अतिरिक्त, यह स्व–निर्णयन् हेतु, भौतिक व कानूनी बाधाओं के अभाव से ऊपर व परे, बाह्य संसाधनों की उपलब्धता की ज़रूरत को भी पहचानती है। इस संकल्पना में इसके बावजूद कमी पाई गई है, क्योंकि स्वायत्त स्वत्व निर्माण का प्रतिपादन करना, अथवा स्वायत्त वरीयताएँ और व्यक्ति के किसी कर्म रूप में प्रयोजन, "किसी भी सामाजिक प्रसंग से पूर्णतः स्वतंत्र किसी काम" के रूप में, सामाजिक परिस्थितियों के साथ किसी संबंध को युक्तिसंगत नहीं ठहराते। (पी. पैटॉन, 1989, पृ. 263) इसको निश्चित रूप से कैन्ट जैसे किसी सकारात्मक–स्वतंत्रता सिद्धांती की परिकल्पना बताया जा सकता है।

उपर्युक्त दो पारम्परिक रूप से प्रबल मुक्ति संकल्पनाओं से असंतुष्ट, स्वतंत्रता सिद्धांती आज स्वतंत्रता की कुछ निश्चित निर्णायक सामाजिक परिस्थितियाँ प्रतिपादित करने हेतु संघर्ष कर रहे हैं। स्वतंत्रता की ये सामाजिक परिस्थितियाँ भौतिक व कानूनी विघ्नों से जीवन के कुछ निश्चित क्षेत्रों के सार्वजनिक रूप से आश्वासित संरक्षण, और व्यक्तियों हेतु आय, शिक्षा व स्वास्थ्य जैसे संसाधनों के सामाजिक प्रावधान द्वारा निशक्त नहीं होती हैं। इसके अतिरिक्त, उनमें दो अन्य प्रावधान शामिल बताये जाते हैं जिन पर प्रथम दो की अपेक्षा कम मतैक्य है। स्वतंत्रता की तीसरी सामाजिक स्थिति में व्यक्ति का उस समाज में मूल्यांकित किए जाते हुए सांस्कृतिक संदर्भ आता है जिसमें वह रहता है। यह सांस्कृतिक संदर्भ उस प्रक्रिया का हिस्सा है, जिसके द्वारा कोई व्यक्ति स्वायत्त वरीयताएँ तैयार करता है, और उसका महत्त्व सांस्कृतिक अधिकारों हेतु माँग से परे निहित होता है, यथा वह इस दावे में अन्तर्निहित है कि व्यक्ति उस समाज में समान रूप से स्वतंत्र नहीं हैं, जिसमें विभिन्न संस्कृतियों का असमान रूप से मूल्यांकन किया जाता है। स्वतंत्रता की चौथी सामाजिक अवस्था है, सामूहिक स्वतंत्रता का कुछ अभिप्राय, जो प्रत्येक व्यक्ति के वोट रखने की राजनीतिक स्वतंत्रता, अथवा अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार से कहीं अधिक है। इस आपत्ति का सामना करने के लिए कि स्वतंत्रता का अर्थ हमेशा कुछ की दूसरों पर शासन करने की आज़ादी होगा, हमें इस दिशा में देखना, और तर्कों को प्रकट करना पड़ता है कि कुछ की आज़ादी को दूसरों की आज़ादी पर निर्भर बनाया जाए।

4.2 नकारात्मक स्वतंत्रता

नकारात्मक स्वतंत्रता का उत्कृष्ट प्रतिवाद रहा है – 1958 में प्रथम प्रकाशित, ईसाइया बर्लिन का 'टू कॉन्सेप्ट्स ऑफ लिबर्टी'। बर्लिन ने 'स्वतंत्र होने' को "दूसरों द्वारा हस्तक्षेपित न होने" के रूप में

परिभाषित किया। "अहस्तक्षेप का क्षेत्र जितना विस्तृत होगा उतनी ही विस्तृत मेरी स्वतंत्रता होगी।" (बर्लिन, 1969, पृ. 123) यह परिभाषा *द लिवाइअॅथॅन* में 'बाह्य बाधाओं' के अभाव रूप में मुक्ति के हॉब्स के प्रस्तुतीकरण की एक उपज है। हॉब्स के अनुसार, "एक स्वतंत्र व्यक्ति, वह है, कि उन बातों में, जो वह अपनी शक्ति व बुद्धिमानी से करने में सक्षम है, वह जो करने की इच्छा रखता है उसे करने में अड़चन नहीं पाता है।" (हॉब्स, 1968, पृ.262) हॉब्स की दृष्टि में, इन अड़चनों में शामिल थे सर्व–प्रधान शासक के वो कानून जो नागरिक समाज की रचना किए जाने के उपरांत सामाजिक अनुबंध द्वारा बनाए गए, क्योंकि मुक्ति 'कानून के मौन' पर निर्भर करती थी। प्राकृत अवस्था में नागरिक कानूनों का अभाव अपने निवासियों के लिए अधिक स्वतंत्रता में व्याख्यायित होना चाहिए था, परन्तु इसके नितान्त अभाव में, प्रत्येक व्यक्ति ने कर्म की दूसरे की स्वतंत्रता के प्रति एक बाहरी अड़चन के रूप में काम किया। इसके कानूनों द्वारा सर्व–प्रधान शासक ने सुनिश्चित किया कि उसके नागरिक एक दूसरे के हस्तक्षेप से मुक्त हों। यहाँ यह ध्यान में रखना अच्छा होगा कि हॉब्स, नकारात्मक स्वतंत्रता के सबसे पहले पक्षधरों में से एक, ने किस प्रकार एक निरंकुश सर्व–प्रधान शासक के 'प्रयोजनीय' कानूनों और उसके पराधीनों की स्वतंत्रता के बीच कोई विरोधाभास नहीं देखा। यह परखने के लिए कि क्या कोई व्यक्ति स्वतंत्र है, यह जाँचना असंगत होता कि क्या उन कानूनों में उसे बोलने का कोई अधिकार है जिनके तहत वह रहता है। निरंकुश सर्व–प्रधान शासक अकेले ही कानून बनाता था। जो निर्णायक था वो था क्या सर्व–प्रधान शासक ने उसके जीवन के किसी क्षेत्र को इतना विस्तृत छोड़ा जितना कि उसके कानूनों द्वारा नियमित न किए जाने पर संभव होता। बर्लिन भी यह कहते हैं: स्वतंत्रता अपने नकारात्मक अर्थ में "सिद्धांततः नियंत्रण क्षेत्र से सम्बद्ध है, न कि अपने स्रोत. वैयक्तिक स्वतंत्रता व लोकतांत्रिक शासन के बीच कोई संबंध नहीं होता। 'मुझ पर कौन शासन करता है?' प्रश्न का उत्तर 'सरकार मेरे साथ कहाँ तक हस्तक्षेप करती है?' प्रश्न से तार्किक रूप से भिन्न है।" (बर्लिन, 1968, पृ. 129–130)

स्वतंत्रता की संकल्पना को स्पष्ट करते हुए हॉब्स ने स्वतंत्रता और योग्यता के बीच भेद दर्शाया : "परन्तु जब गति की बाधा वस्तु विशेष स्वयं के संघटन में हो, हम नहीं कह सकते, यह स्वतंत्रता चाहती है, तिस पर गति करने की शक्ति; जिस प्रकार जब एक पत्थर स्थिर पड़ा होता है, अथवा एक आदमी बीमारी द्वारा उसके बिस्तर से बँधा पड़ा होता है।" (हॉब्स, 1968, पृ. 262) नकारात्मक स्वतंत्रता के अधिकांश व्याख्याता शक्ति अथवा योग्यता और स्वतंत्रता के बीच इस अन्तर की हाँ में हाँ मिलाते हैं। जिस विषय पर वे असहमत होते हैं, वह है एक निश्चित अवस्था को योग्यता के एक अभाव रूप में कब और स्वतंत्रता के एक अभाव रूप में कब अभिलक्षित किया जाना है। पंखों के अभाव में उड़ने में समर्थ न होना, मनुष्यों के मामले में, योग्यता के अभाव का, और न कि अस्वतंत्र होने का एक स्पष्ट उदाहरण है। परन्तु उस व्यक्ति के बारे में क्या जो इतना ग़रीब है कि वो वह चीज़ भी प्रदान नहीं कर सकता "जिस पर कोई कानूनी प्रतिबंध नहीं है – एक रोटी का टुकड़ा, संसार–भर की यात्रा।" बर्लिन का तर्क है कि पूर्वोक्त सामाजिक सिद्धान्त जिसमें यह ग़रीबी "अन्य मनुष्यों के इंतजामत कर चुकने" का ही परिणाम है, जिसके कारण कुछ लोगों के पास भौतिक संसाधनों का अभाव है जबकि दूसरे उनकी प्रचुरता भोगते हैं, ग़रीब आदमी को रोटी खरीदने में असमर्थ होने में नहीं, बल्कि ऐसा करने के लिए अस्वतंत्र होने के रूप में वर्णित किया जाना चाहिए : "दमन का मापदण्ड ही वह भूमिका है जो मैं मानता हूँ कि मेरी इच्छाओं को हतोत्साहित करने में, ऐसा करने हेतु मेरी मंशा होने अथवा न होने पर भी, प्रत्यक्ष या परोक्ष, अन्य मनुष्यों द्वारा निभायी जाती है।" (देखें बर्लिन, 1968, पृ. 123–4) यह निश्चित रूप से हिलेल स्टीनर कृत रचना से बहुत दूर है, जिसके अनुसार किसी व्यक्ति के क्रियाकलाप पर साभिप्राय लगाए गए केवल भौतिक अवरोध ही उस व्यक्ति को यह दावा करने की

छूट देते हैं कि वह स्वतंत्र नहीं है। हम तब देखते हैं कि इस बात की समझ नकारात्मक स्वतंत्रता के पक्षधरों के बीच तक भी बहुत विस्तार लिए है कि क्रियाकलाप के सम्मुख बाधाओं/अवरोधों के रूप में किसको गिनें।

नकारात्मक स्वतंत्रता का एक अन्य व्यापक प्रतिवाद था जॉन स्टूअर्ट मिल का 1859 का निबंध, *ऑन लिबर्टी*। यहाँ मिल का दृष्टिकोण संक्षिप्त में है : "... एकमात्र लक्ष्य जिसके लिए मानवजाति अपने किसी भी समूह के कार्यकलाप की स्वतंत्रता में हस्तक्षेप करने हेतु वैयक्तिक रूप से अथवा सामूहिक रूप से, अधिकृत है, वह है आत्म–रक्षा ... एकमात्र उद्देश्य जिसके लिए शक्ति एक सभ्य समुदाय के किसी भी सदस्य पर, उसकी इच्छा के विरुद्ध, अधिकारपूर्वक प्रयोग की जा सकती है, दूसरों को क्षति पहुँचने से बचाना ही है। उसकी अपनी भलाई, दैहिक अथवा नैतिक, कोई समुचित न्यायसंगति नहीं है ... किसी भी व्यक्ति के व्यवहार का एकमात्र हिस्सा, जिसके लिए वह समाज के प्रति उत्तरदायी है, वो है जो दूसरों से संसृभट होता हो। उस भाग में जो सिर्फ़ उसी से संबंधित है, उसकी स्वाधीनता, वस्तुतः, अप्रतिबद्ध है।" (जे.एस. मिल, 1989, पृ.13)

इस बात पर ज़ोर देते हुए कि क्रियाकलाप के स्वयं से संबंधित होने तथा दूसरे से संबंधित होने के बजाय एक सीमारेखा, हालाँकि अस्पष्ट, होती है, मिल तर्क प्रस्तुत करते हैं कि स्वतंत्रता–सिद्धांत किसी व्यक्ति के स्वयं–संबद्ध क्रियाकलाप क्षेत्र में किसी भी हस्तक्षेप को बरदाश्त नहीं करता। तीन विशिष्ट क्षेत्रों – विचार और उसकी मौलिक व लिखित अभिव्यक्ति का, अभिरुचि व पेशों का, तथा अन्य व्यक्तियों के साथ सम्मिलन व संसर्ग का क्षेत्र – पर चर्चा करते हुए मिल ने दावा किया कि दूसरों को 'सीधे भौतिक क्षति पहुँचने' से बचाने को छोड़कर, समाज के पास इन क्षेत्रों में व्यक्ति विशेष की स्वतंत्रता में हस्तक्षेप करने हेतु कोई अन्य औचित्य प्रतिपादन नहीं रहा। "कोई भी समाज जिसमें इन स्वतंत्रताओं का समग्रतः सम्मान नहीं किया जाता, उसकी सरकार का कोई भी स्वरूप हो, स्वतंत्र नहीं है, और उसमें कोई भी पूर्णतः स्वतंत्र नहीं है जिसमें वे निर्बाध व अप्रतिबद्ध अस्तित्व नहीं रखते।" (जे.एस. मिल, 1989, पृ. 16, 'मेरा' को महत्त्व दें। ध्यान दें, मिल हॉब्सियन विचार को दोहराते हैं, जो बर्लिन द्वारा भी अपनाया गया, कि लोकतंत्र स्वतंत्रता की बराबरी नहीं करता)

मिल के अनुसार, सामाजिक सिद्धांत का उद्देश्य मानवमात्र के सुधार को बढ़ावा देना है। मिल ने दुनिया को यह दिखलाने में अपना योगदान दिया कि वैयक्तिक स्वतंत्रता इस सुधार हेतु एक अनिवार्य साधन है : "... सुधार का एकमात्र अचूक और स्थायी स्रोत स्वतंत्रता ही है, क्योंकि इससे सुधार के उतनी ही संख्या में स्वाधीन केन्द्र संभव हैं, जितने यहाँ व्यक्ति हैं।" (जे.एस. मिल, 1989, पृ.70) मिल ने यह निम्नलिखित शब्दों में स्पष्ट किया : "बोध, विचार, विवेकी अनुभूति, मानसिक कार्यकलाप, और यहाँ तक कि नैतिक पसंद की मानवीय क्षमता भी, केवल विकल्प चुनने में ही प्रयोग की जाती है।" (मिल, पृ. 59) परन्तु यदि स्वतंत्रता की उपयोगिता यह हो कि वह मानवमात्र का सुधार करे, किसी व्यक्ति को उन व्यक्तियों की संभावना का क्या करना जो हमेशा स्वयं–संबद्ध क्रियाकलाप के अपने क्षेत्र में अनुचित तरीकों से कर्म करना पसंद करते हैं? यह हमको सकारात्मक स्वतंत्रता की संकल्पना के समक्ष लाता है।

4.3 सकारात्मक स्वतंत्रता

यदि नकारात्मक स्वतंत्रता के पक्षधर इस प्रकार का कम से कम कुछ क्षेत्र बचाने की आशा करते हैं जिसमें एक व्यक्ति अपनी मर्ज़ी से कुछ करने को स्वतंत्र हो, सकारात्मक स्वतंत्रता के पक्षधर और

अधिक महत्त्वाकांक्षी हैं – वे आत्म–निर्णय के इस क्षेत्र को यथासंभव विस्तार देने की उम्मीद लगाए हैं। वे यह दो तरीकों से करते हैं; प्रथम है कर्म के अवरोधों की संकल्पना में आन्तरिक निग्रहों का समावेश। रूसो ने, उदाहरण के लिए, किसी की इच्छाओं अथवा आवेगों का दास होने को स्वतंत्र होने के नितान्त विपरीत रूप में देखा। हमारी इच्छाएँ विषमयुग्मकी हैं, वे हममें उस परिवेश के कारण जिसमें हम रहते हैं, अथवा शायद हमारे पालन–पोषण के कारण, पैदा होती हैं। अपनी इच्छाओं से दबना, रूसो के अनुसार, प्राधारिक रूप से किसी दूसरे की इच्छाओं से हार मानने के समान ही है। हमें संज्ञानतापूर्वक और विवेकशीलता से अपनी इच्छाओं की पूर्ति करना पसंद करना पड़ता है, यानी, वे आवश्यकताएँ जिनको हम वस्तुतः अपना निजी और अपने स्वयं का मननशील मानते हैं। 'द सोशल कॉन्ट्रेक्ट' में उनके अपने ही शब्दों में, "महज़ भूख का संवेग दासता है, जबकि एक आत्म–विहित संहिता का पालन स्वतंत्रता है।" (रूसो, 1967, पृ.23)

कैन्ट का भी इसी प्रकार का तर्क था – किसी व्यक्ति की स्वतंत्रता उन क्रियाकलापों में कैसे प्रमाणित की जा सकती है जो कि निर्बुद्धि स्वभाव का उन इच्छाओं को प्रेरित करते हुए, जिनका वह आँख मूँदकर अनुसरण करता है, में से किसी एक को लेकर निकला परिणाम हो? इसकी बजाय, स्वतंत्र के रूप में गिनने के लिए, व्यक्ति को किसी ऐसे विवेकपूर्ण सिद्धांत के अनुसार उसकी इच्छाओं में से पसंद करना अथवा चुनना चाहिए जिसको वह स्वयं सकारता हो।

सकारात्मक स्वतंत्रता की संकल्पना में स्व–निर्णीत क्रियाकलाप के क्षेत्र को बढ़ाने का दूसरा तरीका सामूहिक निर्णय लिए जाने के लोकतांत्रिक कार्यप्रणालियों के माध्यम से है। किसी के जीवन क्षेत्र को कानूनों द्वारा अबाधित यथासंभव विस्तार दिए जाने पर इतना ज़ोर नहीं है, परन्तु चूँकि स्वतंत्रता को यथासंभव प्रदत्त अधिकार से अलग पहचाना जाता है और स्व–निर्मित कानूनों के तहत रहने के रूप में परिभाषित किया जाता है, ज़ोर यह सुनिश्चित करने पर है कि व्यक्ति को उन सभी कानूनों के बनाए जाने में बोलने का अधिकार हो जिनके तहत वह रहता है। लोकतंत्र–संबंधी रूसो का तर्क प्रसिद्ध है : ऐसा कोई सरकार का अन्य रूप नहीं है जो स्वतंत्रता के अनुरूप हो। हम स्वाधीन कैसे कहे जा सकते हैं जब तक कि हम उन नियमों को बनाने में बोलने का अधिकार नहीं रखते जो हमारे क्रियाकलापों को नियंत्रित करते हैं। यही उस नैतिक स्वतंत्रता की तुलना में, रूसो की नागरिक–स्वतंत्रता संकल्पना है, जो हमें हमारी लालसाओं का दास बनने से बचाता है।

रूसो ने नैतिक व नागरिक स्वतंत्रता की अपनी संकल्पनाओं को निम्नलिखित रीति से सुसम्बद्ध किया : उसने पाया विधान लोगों द्वारा सामूहिक रूप से तब निर्मित होता है, जब वे मस्तिष्क में (सामान्य हित) आम इच्छा द्वारा, रखते हैं, इस बात के साधन रूप में कि हर व्यक्ति अपनी इच्छाओं के नियंत्रण में रहे। किसी व्यक्ति की अपनी ही कमज़ोर इच्छा के स्थान पर, ये कानून, जिनके बनाए जाने में सभी भाग लेते हैं, यह सुनिश्चित करते हैं कि व्यक्ति स्वयं द्वारा चुने गए जीवन को ही बिताए। जहाँ हॉब्स के उदाहरण में कानूनों की बाध्यता ने किसी व्यक्ति के क्रियाकलाप में हस्तक्षेप से दूसरों को बचाकर किसी की स्वतंत्रता को बढ़ावा दिया, रूसो में, सामूहिक रूप से बनाए गए कानूनों का हस्तक्षेप एक प्रकार की स्वतंत्रता बन गया। रूसो के बाद, टी.एच. ग्रीन सकारात्मक स्वतंत्रता के एक महत्त्वपूर्ण पक्षधर हुए। 1881 के अपने निबंध में, ग्रीन ने कहा : "हम सब शायद सहमत होंगे कि स्वतंत्रता ही, सही अर्थों में, वरदानों में महानतम है; कि इसकी प्राप्ति ही नागरिकों के रूप में हमारे सकल प्रयास का यथार्थ लक्ष्य है। परन्तु जब हम इस प्रकार स्वतंत्रता की बात करते हैं, हमें ध्यानपूर्वक विचार करना चाहिए कि हम इसका क्या अर्थ लेते हैं। हमारा आशय महज़ अवरोध अथवा बाध्यता से मुक्ति नहीं होता। हमारा अभिप्राय सिर्फ़ हम जो पसंद करते हैं पर ध्यान दिए बग़ैर हम जैसा चाहें वैसा करें की

आज़ादी नहीं होता। हमारा तात्पर्य ऐसी स्वतंत्रता से नहीं होता जो दूसरों की आज़ादी के नुकसान की लागत पर एक आदमी अथवा आदमियों के एक समूह द्वारा उपभोग की जा सकती है। जब हम आज़ादी की बात करते हैं ... हमारा मतलब होता है किसी करने लायक काम को करने अथवा उपभोग्य वस्तु को उपभोग करने की क्षमता, और कि, कुछ ऐसा भी जो हम दूसरों के साथ सामान्यतः करते अथवा उपभोग करते हैं ... सच्ची स्वतंत्रता का आदर्श ही मानव समाज के सभी सदस्यों हेतु समान रूप से उन्हें स्वयं को सर्वश्रेष्ठ बनाने के लिए शक्ति की सर्वोच्च मात्रा है..." (ग्रीन, 'लिबरल लैजिस्लेशन एण्ड फ्रीडम ऑफ कॉण्ट्रेक्ट', 1881, पृ. 199–200)

जे.एस. मिल तथा टी.एच. ग्रीन व्यक्तियों को 'उन्हें स्वयं को सर्वश्रेष्ठ बनाने' की छूट देने में ही स्वतंत्रता के महत्त्व को अनुभव करने में एकमत थे; तथापि वे स्वतंत्रता की परिभाषा के विषय में असहमत थे। यही वह बिन्दु है जो इस बारे में सोच को जन्म देता है – व्यक्तियों के लिए स्वतंत्र रहना क्यों महत्त्वपूर्ण है? क्यों स्वतंत्रता के महत्त्व पर सहमति अभी तक उसके अभिप्रायों पर भेद दर्शाती है?

4.4 स्वतंत्रता पर सामयिक बहस

अब तक नकारात्मक व सकारात्मक स्वतंत्रता समर्थकों के बीच आज़ादी पर पारम्परिक बहस की व्याख्या करने के बाद, आइए कुछ ऐसे सैद्धान्तिक दृष्टिकोणों पर नज़र डालते हैं जो इस बहस हेतु स्पर्श्य हैं। हम अब देखेंगे कि किस प्रकार नारी–अधिकारवाद स्वतंत्रता के महत्त्व से पक्के तौर पर जुड़ चुका है।

यह घोषित किया गया है कि " स्वतन्त्रता ने अपनी लम्बी यात्रा एक स्त्री के महत्त्व के रूप में पाश्चात्य संचेतना में शुरू की"। (ओ. पैटरसन, 1991, पृ. 51) महिलाएँ सर्वप्रथम गुलाम नौवीं व आठवीं शती–अंत ई.पू. यूनान में आदिम सरकार घटन काल में बनीं। तत्कालीन कुलीन वंशों के बीच निरंतर संघर्ष के दौरान, पुरुष युद्ध–बंदी मार दिए गए, जबकि महिलाएँ गुलाम बना ली गईं। शुरुआती यूनानी समाज में प्रथम दासों के रूप में, वे महिलाएँ जो वास्तव में गुलाम थीं और जो बंदीकरण व दासकरण के भय में जीती थीं, दोनों ने दासता वाली स्थिति के प्रति विरोधात्मक, यथा स्वतंत्रता वाली स्थिति, के बारे में सोचा, और उसका मूल्य आँका।

स्वतंत्रता के इस आदर्श को जो प्राचीन यूनान की महिलाओं की संचेतना में उभरा, पैटरसन व्यक्तिगत स्वतंत्रता की एक संकल्पना पुकारते हैं; वह, हालाँकि इंगित करते हैं कि यह नकारात्मक स्वतंत्रता की उस धारणा से भिन्न है जो अब पश्चिम में सुविदित है : "पुराने ज़माने की महिलाएँ व्यक्तिगत स्वतंत्रता की एक विशुद्ध रूप से नकारात्मक दृष्टि के साथ कभी संतुष्ट नहीं रहीं, न सिर्फ़ इस कारण कि वे इसकी प्रछन्न शून्यता व नैतिक रिक्तता को पहचानती थीं बल्कि इस कारण भी कि वे देख सकती थीं कि किस प्रकार एक दुर्बलीकृत नकारात्मक स्वतंत्रता सहज ही दूसरों पर शक्ति के रूप में स्वतंत्रता को शिकमी दे दी गई।" (पैटरसन, पृ. 398) दासों के रूप में, प्राचीन यूनानी महिलाओं ने एक बार आज़ाद हो जाने पर अपनी स्वेच्छा को निश्चयपूर्वक कहने में समर्थ हो जाने की कल्पना की, परन्तु महिला–गुलामों के रूप में स्वतंत्रता के ठाठ–बाट को दूसरों की इच्छा प्रधानता के रूप में नहीं, वरन् दूसरों के साथ बाँटे जाने वाली एक अवस्था के रूप अपने मानस–पटल पर अंकित किया। उनके अनुसार, स्वतंत्रता प्रेम था, अपने भाई–बंधु व परिवारों के पास लौटने की एक दशा।

महिलाओं की स्वतंत्रता–संकल्पना को संग लिए यह मामला पश्चिम में साठ के दशक–पश्चात् नारी–आंदोलन के लेखों में प्रबल हो गया है, विशेषकर छोटे लड़के व लड़कियों पर मातृ–प्रधान पालन–पोषण के पार्थक्यसूचक प्रभाव पर कुछ महिला मनोवैश्लेषिक विचारकों की कृति में। माँ जो प्राथमिक प्रभारी होती है, स्वार्थ आदि से बाहर निकल कर पूरे विश्व का प्रतिनिधित्व करती है, यथा, भौतिक संसार, सभी शिशुओं हेतु, और अपनी माँ से संबंध ही एक बच्चे का संसार में दूसरों के प्रति दायित्व निश्चित करता है : शिशु का दृष्टिकोण अपने और संसार के प्रति सभी पहली बार इस परमपूर्व संबंध से ही व्युत्पन्न होते हैं। जीवन के अपने प्रथम कुछ वर्षों में मानव शिशु अपनी जननी के साथ अपने संबंध में विभिन्न चरणों से गुजरते हैं – सहजीवन, पृथक्करण और व्यक्तिकरण। नर व मादा शिशु एक पितृसत्तात्मक संस्कृति में, इन चरणों का भिन्न रूप से अनुभव करते हैं क्योंकि उनकी माँएँ, मनोवैज्ञानिक एवं समाज विज्ञान–संबंधी कारणों से, उन्हें भिन्न प्रकार से उत्तर देती हैं।

माँएँ, उदाहरण के लिए, अपने बेटों के पृथक्करण व व्यक्तिकरण को अधिक आसानी से प्रेरित करने में सक्षम होती हैं, जबकि अपनी बेटियों के संबंध में वे सहजीवन छोड़ देने को कम इच्छुक होती हैं। इसके अतिरिक्त, छोटे लड़के अपनी माँओं के साथ अपनी प्राथमिक पहचान को महसूस करना शीघ्र ही सीख लेते हैं, क्योंकि वे अनुभव करते हैं कि उनकी पुरुष पहचान एक स्त्री की भाँति होने के रूप में परिभाषित नहीं की जाती है। ये मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाएँ आमतौर पर दूसरों के साथ उनके संबंधों पर प्रभाव डालती है : पुरुषोचित लिंगभेद पहचान की प्राप्ति में लगाव अथवा संबंध का अनंगीकार शामिल है। बचपन में मनोविज्ञान की यह प्रक्रिया वयस्क पुरुष प्रतिक्रियाओं की व्याख्या करने हेतु प्रयोग की गई है; उदाहरण के लिए, सभी संबंधों की आभासी पुरुष अनुभूति जैसे भय–प्रदर्शन करना, और स्वतंत्रता–संबंधी उनका भाव जैसे जन(नी) की ग़ैर–मौजूदगी। ऐसा करके वह स्वत्व और स्वायत्तता के लिए प्रचलित मानदण्डों का संदिग्धीकरण भी करती है, जिनको कि मनुष्यों के अनुभवों पर आधारित माना जाता है। दूसरों की ग़ैर–मौजूदगी की अपेक्षा करने के रूप में स्वायत्तता अथवा स्वतंत्रता के अहसास का वैचारीकरण करके विभ्रान्त किया जाता है। स्वायत्तता का विकास अन्य स्वत्वों के साथ अन्तर्क्रिया में ही होता है, और इसी कारण स्वतंत्रता को अहस्तक्षेप की बजाय अन्य शब्दों में वैचारीकृत किए जाने की आवश्यकता है।

एक अन्य अग्रणी नारी–अधिकारवादी विदुषी, कैरोल पेटमैन, भी स्वतंत्रता की एक नई कहानी सुनाने का प्रयास करती हैं। अमेरिकी समाज–विज्ञान संबंधित मनोवैश्लेषिक सिद्धांत की छिद्रान्वेषी, पेटमैन तिस पर भी इस बात की चिंता स्वतंत्रता की वैकल्पिक संकल्पना को जन्म दिए जाने के साथ बाँटती हैं; एक संभाव्य घटना उनका तर्क है, जो अपने इस मिथक के सहारे हमारे सामाजिक संविदा सिद्धांत के प्रलोभन को त्यागे जाने पर निर्भर करती है कि व्यक्ति स्वयं में स्वामित्व अधिकार रखता है। महिलाओं की स्वतंत्रता को जन्म देने के प्रयास असंतोषजनक रहे हैं; वह स्पष्ट करती हैं, क्योंकि अधिकतर नारी–अधिकारवादी यह अनुभव करने में विफल रहे हैं कि आधुनिक समाज न सिर्फ़ एक सामाजिक, बल्कि एक स्त्री–पुरुष संबंध विषयक अनुबंध पर भी आधारित है। मूल अनुबंध ने एक न्यायसंगत नागरिक समाज को नहीं वरन् एक पितृसत्तात्मक नागरिक समाज को जन्म दिया, क्योंकि यह अनुबंध आदमियों के बीच, अन्य चीज़ों के साथ ही, "औरतों तक समान मैथुनिक पहुँच का उपभोग" करने हेतु था। यह "पुरुषख्जन, की स्वतंत्रता और महिलाओं की परतंत्रता" में परिणत हुआ; नागरिक स्वतंत्रता एक "पुरुषोचित सहज गुण" बनी ही है। (सी. पेटमैन, 1988, पृ. 2) यह मूल अनुबंध साथ ही एक सामाजिक–मैथुनिक–दास अनुबंध भी था, और यदि इसके सामाजिक पहलू पर ध्यान केन्द्रित किया जाए, कोई नहीं समझ सकता कि इस पर आधारित एक समाज में महिलाएँ कैसे मुक्त नहीं हो सकती हैं।

पेटमैन इस प्रकार अनुबंध की आलोचक हैं और दावा करती हैं कि नारी–स्वतंत्रता को सिर्फ़ अनुबंध की भाषा त्यागकर पैदा नहीं किया जा सकता। यह भाषा की एक संकल्पना को प्रेरित करती है, जैसे उनके स्वामित्व में अधिकार रखना, और इसका उपसिद्धान्त है स्वतंत्रता को स्वावलम्बन के रूप में देखना, विशेषकर श्रम पण्यक्षेत्र में भाग लेने संबंधी स्वावलम्बन। पेटमैन इस तर्क को एक बाद के अंश में भी जारी रखती हैं, यह दावा करते हुए कि 'स्वतंत्रता स्वावलम्बन के रूप में' को 'स्वतंत्रता स्वायत्तता के रूप में' का रूप दे दिया जाना चाहिए, एक आज़ादी जो सभी नागरिकों की अन्तर्निर्भरता की पहचान के माध्यम से सुरक्षित है। उपर्युक्त चर्चा ने एक विशिष्ट वैचारिक परम्परा में स्वतंत्रता के व्यवहार का उल्लेख किया। यदि हम, फिर भी, किसी अन्य वैचारिक स्थिति पर नज़र डालें, उदाहरण के लिए, उदारवादी–साम्यवादी बहस, हम वैयक्तिक स्वतंत्रता के अभिप्राय विषयक इसी प्रकार के विवादों को देख सकते हैं।

4.5 सारांश

हर व्यक्ति के जन्मसिद्ध अधिकार के रूप में स्वतंत्रता की धारणा निश्चित रूप में आधुनिकता का ही उपहार है, इस बात का महत्त्व नहीं कि वह महसूस किए जाने से कितनी दूर हो सकती है। स्वतंत्रता की हाल की चर्चाओं ने जिस पर ध्यान केन्द्रित किया है, वो हैं वैयक्तिक स्वतंत्रता और हमारी सामाजिक अन्तर्निर्भरता के बीच संबंध। यह संबंध इस सामाजिक अन्तर्निर्भरता की उपेक्षा करके नहीं, बल्कि, उसको स्वीकार करके कायम है, जिसको हम वैयक्तिक स्वतंत्रता की एक उपयुक्त संकल्पना बना सकते हैं।

4.6 अभ्यास

1. एक त्रयी संकल्पना, यानी, तीन शर्तों वाली एक संकल्पना के रूप में स्वतंत्रता की संकल्पना को प्रस्तुत करने के प्रयास के विषय में आप क्या सोचते हैं? ये तीन शर्तें क्या हैं?
2. 'ए' और 'बी' के प्रभावक्षेत्र को बदलकर स्वतंत्रता की संकल्पनाओं के बीच आप किस प्रकार भेद कर सकते हैं? कुछ उदाहरण दें।
3. स्वतंत्रता की धारणा और स्वतंत्रता की विभिन्न संकल्पनाओं में क्या अंतर है?
4. स्वतंत्रता को वे सिद्धांती जो उसकी सामाजिक दशाओं पर ध्यान केन्द्रित करते हैं, और नकारात्मक व सकारात्मक स्वतंत्रता के पक्षधरों के बीच क्या आप कोई अंतर पाते हैं? इन अंतरों में से कुछ क्या हैं?
5. क्रियाकलाप के समक्ष बाह्य अवरोधों को परिभाषित करने में नकारात्मक स्वतंत्रता के पक्षधर किस प्रकार भेद रखते हैं? यह शक्ति/योग्यता और स्वतंत्रता के बीच उनके भेद को किस प्रकार प्रभावित करता है?
6. जब बर्लिन तर्क देते हैं कि जो स्वतंत्रता के विषय हेतु प्रासंगिक है, व्यक्ति के क्रियाकलाप पर नियंत्रण का क्षेत्र ही है, और न कि इस नियंत्रण का स्रोत, उनका क्या अभिप्राय है?
7. स्वयं–संबंधित तथा अन्य–संबंधित क्रियाकलाप के बीच मिल का विभेदीकरण किस प्रकार स्वतंत्रता की उसकी संकल्पना हेतु प्रासंगिक है?

8. मिल क्यों मानते हैं कि वैयक्तिक स्वतंत्रता सामाजिक विकास का एक अनिवार्य पूर्वापेक्षित गुण है?

9. इस उक्ति से क्या तात्पर्य है कि 'महज़ भूख हेतु गुलामी स्वतंत्रता नहीं है'? कुछ उदाहरण दें।

10. रूसो नैतिक व नागरिक स्वतंत्रता की अपनी संकल्पनाओं को एक–दूसरे से किस प्रकार जोड़ने का प्रयास करते हैं?

11. क्या आप मानते हैं कि जब हम कर्म करें हम क्या करें की विषय–वस्तु क्रियाकलाप–स्वतंत्रता की हमारी परिभाषा का हिस्सा होनी चाहिए?

12. स्वतंत्रता मूल्यवान क्यों है? व्यक्तियों के लिए स्वतंत्र होना क्यों महत्त्वपूर्ण हैं?

13. नारी–अधिकारवादी क्यों तर्क देते हैं कि स्वतंत्रता की नकारात्मक संकल्पना स्वतंत्रता का एक ठेठ रूप से पुरुष दृष्टिकोण है?

14. प्रचलित पालन–पोषण व्यवहार किसी व्यक्ति के आत्म–भाव को और दूसरों से उसके संबंध को किस प्रकार प्रभावित करते हैं?